[2020] 1 एस.सी.आर. 663

संजीव कपूर

बनाम

चंदना कपूर और अन्य

(दांडिक अपील क्रमांक 286/2020)

19 फरवरी, 2020

[अशोक भूषण और आर. सुभाष रेड्डी, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: धारा 362 – न्यायालय निर्णय परिवर्तन नहीं करेगा– वर्तमान मामले में, फैमिली कोर्ट ने इसका निपटारा कर दिया प्रतिवादी–पत्नी द्वारा सीआरपीसी की धारा 125 के तहत भरण–पोषण याचिका दायर की गई। अपीलकर्ता–पति को मासिक भरण–पोषण का भुगतान करने का निर्देश देना विवाद के पक्षकारों को आपसी सहमति से तलाक के लिए याचिका दायर करनी होगी– पति ने केवल चार महीने तक भरण–पोषण का भुगतान किया– प्रतिवादी– पत्नी ने भरण–पोषण की भुगतान के आदेश को लागू कराने के लिए निष्पादन याचिका दायर की– कुटुम्ब न्यायालय ने निष्पादन याचिका खारिज कर दी, यह अभिनिर्धारित करते हुए, कि भरण–पोषण का आदेश पूरी तरह से सशर्त था और पक्षकारों द्वारा संबंधित दायित्वों की पूर्ति के विषयान्तर्गत था जिसे उन्होंने पूरा नहीं किया और इसलिए, धारा 125(3) के तहत आवेदन पोषणीय नहीं थी– पत्नी ने धारा 125 में पारित आदेश को पुनः सुनवाई के लिए याचिका दायर की– कुटुम्ब न्यायालय ने धारा 125 याचिका को पुनर्जीवित कर दिया– पति ने धारा 482 के तहत याचिका दायर करके इसे चुनौती दी– उच्च न्यायालय ने धारा 482 याचिका खारिज कर दी– अपील करने पर अभिनिर्धारित : धारा 125 के तहत आदेश पारित करने के बाद मजिस्ट्रेट पदकार्य–निवृत्त नहीं बन जाता है – धारा स्पष्ट रूप से अनुध्यात करती है कि मजिस्ट्रेट को समय–समय पर क्षेत्राधिकार का प्रयोग करना पड़ सकता है – कुटुम्ब न्यायालय द्वारा वर्तमान मामले में धारा 125 के तहत पत्नी के भरण–पोषण आवेदन को पुनर्जीवित करने के आदेश को अपास्त करते हुए समझौते पर पारित आदेश को धारा 362 में निहित प्रतिबंध से प्रभावित नहीं किया गया है– पति का यह अभिवाक कि धारा 362 ने मजिस्ट्रेट को भरण–पोषण आवेदन पुनर्जीवित करने से रोक दिया है, तर्कसंगत नहीं है– उच्च न्यायालय ने धारा 482 के तहत आवेदन खारिज करने में कोई त्रुटि कारित नहीं की है– धारा 482 के तहत दी गई उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग न्याय हित को सुरक्षित करने के लिए किया जाना चाहिए– उच्च न्यायालय ने धारा 482 सीआरपीसी– पारिवारिक कानून– भरण–पोषण– दंड प्रक्रिया संहिता, 1898– धारा 369 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में हस्तक्षेप करके त्रुटि की।

कोर्ट ने अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित किया : 1. दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 369 द्वारा चित्रित विधायी योजना, साथ ही दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 द्वारा वर्णित विधायी योजना एक ही है। दांडिक न्यायालय द्वारा अपने निर्णय को परिवर्तन या पुनर्विलोकन करने के लिए लगाया गया प्रतिबंध एक प्रयोजन और उद्देश्य से है। आपराधिक न्याय परिदान प्रणाली आपराधिक न्यायालय को लिपिकीय या अंकगणितीय त्रुटि को ठीक करने के अलावा मामले को निपटाने वाले निर्णय या अंतिम आदेश को परिवर्तन या पुनर्विलोकन करने की शक्ति नहीं देती है। किसी आपराधिक न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय या मामले को निपटाने के लिए अंतिम आदेश पारित करने के बाद, न्यायालय पदकार्य–निवृत्त हो जाती है और किसी भी गलती या स्पष्ट चूक को केवल कानून के अनुसार उचित मंच द्वारा ठीक करने के लिए छोड़ दिया जाता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 "इस संहिता या तत्समय लागू किसी अन्य कानून द्वारा अन्यथा इसके सिवाय" शब्द से शुरू होता है। उपरोक्त अभिव्यक्ति का स्पष्ट अर्थ है कि सीआरपीसी की धारा 362 में निहित

कठोरता। निम्नलिखित दो शर्तों में छूट दी गई है:– i) दंड प्रक्रिया सहिंता द्वारा उपबंधित – "अन्यथा इसके सिवाय" ii) तत्समय प्रवृत्त कोई अन्य कानून। [पारस 18, 20][672–बी–एफ]

2. सीआरपीसी की धारा 125 को गौर से देखने पर ही पता चलता है कि न्यायालय निर्णय या अंतिम आदेश पारित करने के बाद सीआरपीसी की धारा 125 के तहत कार्यवाही करना पदकार्य–निवृत्त नहीं बनता। धारा में स्वयं स्पष्ट प्रावधान शामिल हैं जहां आदेश दिया गया है इसके तहत पारित को रद्द किया जा सकता है या परिवर्तन किया जा सकता है जो सीआरपीसी की धारा 125(1), धारा 125(5) और धारा 127 से ध्यान देने योग्य है । सीआरपीसी की धारा 125 में, प्रयुक्त अभिव्यक्ति "समय–समय पर मजिस्ट्रेट द्वारा निर्देशित" से है। 'समय–समय पर' अभिव्यक्ति के प्रयोग का उद्देश्य और अर्थ होता है। इसमें स्पष्ट रूप से अनुध्यात किया गया है कि सीआरपीसी की धारा 125(1) के तहत पारित आदेश के संबंध में, मजिस्ट्रेट को समय–समय पर क्षेत्राधिकार का प्रयोग करना पड़ सकता है। सीआरपीसी की धारा 125(5) द्वारा, मजिस्ट्रेट को स्पष्ट रूप से सशक्त किया गया है धारा 125(1) सीआरपीसी के तहत पारित आदेश को कुछ शर्तों की पूर्ति कर, रद्द करने के लिए स्पष्ट अधिकार है । सीआरपीसी की धारा 127(2) मजिस्ट्रेट को धारा 125 के तहत किसी आदेश को रद्द करने या परिवर्तन करने का अधिकार भी देती है। विधायी योजना को संजीव कपूर बनाम चंदना कपूर और अन्य द्वारा निरूपित किया गया है। सीआरपीसी की धारा 125 और 127 में स्पष्ट रूप से सीआरपीसी में प्रदान की गई परिस्थितियों और घटनाओं की गणना की गई है, जहां न्यायालय मामले का निपटारा करने वाला निर्णय या अंतिम आदेश पारित कर उसे परिवर्तन कर सकती है या उसका पुनर्विलोकन कर सकती है। इस प्रकार, धारा 362 में निहित प्रतिबंध को सीआरपीसी की धारा 125 के तहत कार्यवाही करने में स्पष्ट रूप से छूट दी गई है। [पैरा 23–26][675–जी–एच; 678–डी–एच; 679–ए]

3. यह अभिलेख में आया कि समझौता पर आदेश पारित होने के बाद, अपीलकर्ता ने अपने मामले के अनुसार केवल चार महीने के भरण–पोषण का भुगतान किया। न्यायालय द्वारा स्वीकृत समय के भीतर अपीलकर्ता द्वारा बकाया राशि का भुगतान नहीं किया गया। जब अपीलकर्ता ने समझौते के तहत अपनी प्रतिबद्धता का सम्मान नहीं किया, अपीलकर्ता द्वारा समझौते की शर्तों का पालन न करने पर भरण–पोषण देने के लिए दबाव न डालकर पत्नी को अधर में नहीं छोड़ा जा सकता। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि न्याय को आगे बढ़ाया जा सके और उस महिला की रक्षा की जा सके जिसके लाभ के लिए ये प्रावधान लागू किए गए हैं। [पैरा 29][680–बी–डी]

बादशाह बनाम उर्मिला बादशाह गोडसे और अन्य (2014) 1 एससीसी 188 : [2013] 10 एससीआर 259; महुआ बिस्वास (श्रीमती) बनाम स्वागता बिस्वास और अन्य (1998) 2 एससीसी 359 –का अवलंब लिया गया है।

संकठा सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1962 एआईआर 1208: [1962] सप्ली. एससीआर 817; श्रीमती सूरज देवी बनाम प्यारे लाल और एक अन्य एआईआर 1981 एससी 736: [1981] 2 एससीआर 485; मोस्ट सिमरिखिया बनाम श्रीमती डॉली मुखर्जी @ श्रीमती छवि मुखर्जी और अन्य AIR 1990 SC 1605: [1990] 1 एससीआर 788; हरि सिंह मान बनाम हरभजन सिंह बाजवा और अन्य (2001) 1 एससीसी 169: [2000] 4 सप्ली. एससीआर 313; राज्य बनाम के.वी. राजेंद्रन और अन्य (2008) 8 एससीसी 673 : [2008] 12 एससीआर 1141 – का संदर्भ लिया गया है।

<u>संदर्भित न्याय दृष्टांत</u>

[1962] सप्ली. एससीआर 817 के पैरा 12 का संदर्भ लिया गया है।

[1981] 2 एससीआर 485 के पैरा 13 का संदर्भ लिया गया है।

[1990] 1 एससीआर 788 के पैरा 14 का संदर्भ लिया गया है।

[2000]4 सप्ली. एससीआर 313 के पैरा 15 का संदर्भ लिया गया है।

[2008] 12 एससीआर 1141 के पैरा 16 का संदर्भ लिया गया है।

(1998) 2 एससीसी 359 पैरा 17 का अवलंब लिया गया है।

[2013] 10 एससीआर 259 के पैरा 22 का अवलंब लिया गया है।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: दांडिक अपील क्रमांक – 286/2020

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के प्रकरण क्रमांक CRM–M–4663–2019 पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 05.11.2019.

अपीलकर्ता की ओर से सुबोध मार्कण्डेय, वरिष्ठ अधिवक्ता, प्रमित सक्सेना, राहुल अग्रवाल, अमित प्रताप सिंह, अधिवक्तागण ।

उत्तरदाताओं की ओर से ऋषभ जैन, अधिवक्ता ।

न्यायालय का निर्णय पारित किया गया

द्वारा अशोक भूषण, न्यायमूर्ति

1. यह अपील पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के सीआरएम–एम–4663 में पारित निर्णय दिनांक 05.11.2019 के खिलाफ प्रस्तुत की गई है, जिसे अपीलकर्ता ने अतिरिक्त प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, फ़रीदाबाद द्वारा पारित आदेश दिनांक 05.01.2019 को अपास्त करने के लिए दायर किया था। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दायर याचिका को खारिज कर दिया।

2. इस अपील पर निर्णय लेने के लिए प्रकरण के आवश्यक संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:---

अपीलार्थी का विवाह दिनांक 04.11.1998 को प्रतिवादी क्रमांक–1 से हुआ था। उनके विवाह से दिनांक 17.08.1999 को एक पुत्री एवं दिनांक 18.07.2005 को एक पुत्र का जन्म हुआ । प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा अपने पति के खिलाफ दिनांक 09–07–2013 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था, जिसमें प्रतिवादी संख्या –1 के साथ–साथ प्रतिवादी संख्या 2 और 3, अवयस्क पुत्री एवं अवयस्क पुत्र के लिए भरण–पोषण का दावा किया गया था। दिनांक 14.10.2013 को अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी क्रमांक– 1 के खिलाफ तलाक के लिए याचिका दायर की। कुटुम्ब न्यायालय द्वारा किए गए सुलह प्रयासों पर पक्षकारों ने न्यायालय में अलग से अभिलिखित नियमों और शर्तों पर मामले को सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझा लिया। समझौते के अनुसार अपीलकर्ता को जुलाई, 2015 से अप्रैल, 2017 तक पतिवादीगण के भरण–पोषण के लिए 25,000/– रुपये प्रति माह का भुगतान करना था। मई, 2017 से, प्रति माह 25,000/– रुपये की राशि सीधे प्रतिवादी नंबर–1, चंदना कपूर के खाते में प्रत्येक माह की 10 तारीख से पहले जमा की जानी थी। बकाया राशि का भुगतान छह महीने के भीतर किया जाना था। आगे यह विचार किया गया कि अपीलकर्ता और प्रतिवादी क्रमांक–1, नियम और शर्तों को शामिल करके आपसी सहमति से तलाक के लिए याचिका दायर करेंगे। इस प्रकार, कुटुम्ब न्यायालय द्वारा दिनांक 06.05.2017 के आदेश द्वारा भरण–पोषण याचिका का निपटारा कर दिया गया।

3. अपीलकर्ता ने मई, 2017 से केवल चार महीने के लिए भरण–पोषण का भुगतान किया यानी 1,00,000/– रुपये। प्रतिवादी संख्या–1 ने जनवरी, 2018 में दंड प्रकिया संहिता की धारा 125(3) के तहत दिनांक 06.05.2017 के आदेश को लागू करने हेतु एक निष्पादन याचिका संख्या 240/2018 का आवेदन दाखिल किया। प्रतिवादी क्रमांक–1 द्वारा दाखिल निष्पादन याचिका को अतिरिक्त प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, फरीदाबाद द्वारा दिनांक 16.07.2018 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि दिनांक 06.05.2017 का आदेश पूरी तरह से

सशर्त होने से, और पक्षकारों द्वारा संबंधित दायित्वों की पूर्ति के अधीन था, जिसे उन्होंने पूरा नहीं किया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(3) के तहत आवेदन पोषणनीय नहीं था।

4. आदेश के निष्पादन के लिए प्रतिवादी क्रमांक 1 द्वारा दायर आवेदन खारिज होने के बाद, प्रतिवादी क्रमांक 1 ने दिनांक 06.05.2017 के आदेश को वापस लेने के लिए दिनांक 31.07.2018 को आवेदन प्रस्तुत किया। प्रत्यर्थी क्रमांक–1 ने आवेदन में कहा कि अपीलार्थी ने सहमति के अनुसार बकाया राशि जमा नहीं की और अपीलार्थी द्वारा भुगतान की गई कुल राशि केवल रुपए 75,000/– भरण–पोषण के लिए थी। प्रत्यर्थी संख्या–1 ने प्रार्थना की कि आदेश दिनांक 06.05.2017 को वापस लिया जा सकता है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 (3) के तहत आवेदन को पुनःस्थापित किया जा सकता है और पक्षकारों को सुनने के बाद गुण–दोष पर निर्णय लिया जा सकता है। प्रत्यर्थी क्रमांक–1 द्वारा दाखिल आवेदन पर अपीलार्थी द्वारा आपत्ति दर्ज करके आपत्ति जताई गई थी। आपत्ति में, यह कहा गया था कि अपीलार्थी ने शर्तों के अनुसार कुछ राशि का भुगतान किया था क्योंकि प्रतिवादी पीछे हट गया था, भुगतान रोक दिया गया था।

5. विद्वान अतिरिक्त प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय ने दिनांक 05.01.2019 के आदेश द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत याचिका को पुनःस्थापित करने के दिनांक 06.05.2017 के आदेश को अपास्त कर दिया। परिवार न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 05.01.2019 को चुनौती देते हुए, अपीलकर्ता ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय में आवेदन दायर किया था। जिसे उच्च न्यायालय ने आदेश दिनांक 05.11.2019 द्वारा खारिज कर दिया है। उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 05.11.2019 से व्यथित होकर अपीलकर्ता ने यह अपील प्रस्तुत की है।

6. अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री सुबोध मार्कंडेय ने निवेदन किया है कि प्रतिवादी क्रमांक–1 द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा– 125 के तहत प्रस्तुत की गई आवेदन को, अंतिम रूप से विद्वान जिला न्यायाधीश, परिवार न्यायालय द्वारा परिवार न्यायालय के पास आदेश को रद्द करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था, दिनांक 06.05.2017 के आदेश द्वारा निर्णित कर दिया गया था । दिनांक 05.01.2019 का आक्षेपित आदेश बिना अधिकारिता के है, और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के प्रावधानों के अंतर्गत है।

7. यह प्रस्तुत किया जाता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के अनुसार न्यायालय लिपिकीय या अंकगणितीय त्रुटि को ठीक करने के अलावा निर्णय को बदल या समीक्षा नहीं कर सकता है। यह निवदेन किया जाता है कि प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय का आदेश दिनांक 05.01.2019 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा के विपरीत होने के कारण अवैध है। उन्होंने निवेदन किया है कि उच्च न्यायालय ने दिनांक 05.01.2019 के आदेश को अपास्त नहीं करने में त्रुटि की है।

8. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अपनी निवेदनों के समर्थन में इस न्यायालय के कई निर्णयों का अवलंब लिया है जिन पर आगे ध्यान दिया जाएगा।

9. प्रतिवादी कैविएट पर अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित हुआ। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया।

10. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता की निवेदनों पर विचार किया है और अभिलेखों का अवलोकन किया है।

11. इस अपील में निर्धारित किया जाने वाला एकमात्र बिंदु यह है कि क्या अतिरिक्त प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय द्वारा दिनांक 05.01.2019 को पारित आदेश में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत आवेदन का निपटान करने वाले आदेश दिनांक 06.05.2017 को अपास्त करते हुए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत आवेदन को पुनःस्थापित करना, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 के विपरीत था। जो यह प्रावधान करता है कि कोई भी न्यायालय लिपिकीय या अंकगणितीय गलती को सुधारने के अलावा अपने निर्णय में बदलाव या पुनर्विलोकन नहीं कर सकता है। दंड प्रक्रिया संहिता की

धारा 362 के अध्याय XXVII में निहित "निर्णय" निम्नलिखित प्रभाव वाला है:––

> **"धारा 362– न्यायालय का अपने निर्णय में परिवर्तन न करना –** इस संहिता या तत्समय प्रवृत किसी अन्य कानून द्वारा जैसा उपबंधित है उसके सिवाय कोई न्यायालय जब उसने किसी मामले को निपटाने के लिए अपने निर्णय या अंतिम आदेश पर हस्ताक्षर कर दिए हैं तब लिपिकीय या गणितीय भूल को ठीक करने के सिवाय उसमें कोई परिवर्तन नहीं करेगा या उसका पुनर्विलोकन नहीं करेगा।"

12. हम पहले उन निर्णयों पर ध्यान दे सकते हैं जिन पर अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने अपनी निवेदनों के समर्थन में अवलंब लिया है। पहला निर्णय जिस पर अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने अवलंब लिया है वह संकठा सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 1962 एआईआर 1208 का है। उपरोक्त मामले में जब एक दांडिक अपील विचारण न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए आई, तो विचारण न्यायालय ने यह देखते हुए अपील खारिज कर दी कि अपीलकर्तागण अनुपस्थित हैं, और उनके अधिवक्ता अपील पर बहस करने के लिए उपस्थित नहीं हुए हैं। न्यायायलय ने यह भी टिप्पणी की है कि उसने मजिस्ट्रेट के निर्णय का अवलोकन किया है और दस्तावेज को देखा है और उसमें हस्तक्षेप का कोई आधार नहीं है। अपील की पुनः स्थापित करने के लिए अपीलीय न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दायर किया गया था, जिसे विद्वान सत्र न्यायाधीश ने मंजूरी दे दी थी। यद्यपि जब अपील को सुनवाई के लिए फिर से सूचीबद्ध किया गया तो विद्वान न्यायाधीश ने यह विचार रखा कि अपीलीय न्यायालय के पास उस अपील का पुनर्विलोकन करने या उसे पुनःस्थापित करने की कोई शक्ति नहीं है, जिसका निपटारा कर दिया गया था। याचिका खारिज कर दी गई। दांडिक पुनरीक्षण उच्च न्यायालय में दायर किया गया था जिसे भी खारिज कर दिया गया था। उपरोक्त मामले में इस न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 369 पर विचार करने का अवसर मिला था जो अब दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 362 है। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि संहिता की धारा 369 न्यायालयों को अपने निर्णय का पुनर्विलोकन या परिवर्तन करने से प्रतिबंधित करती है। इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित प्रति–पादित किया गया थाः––

> "अपीलकर्ताओं से यह आग्रह किया गया है कि श्री तेज पाल सिंह अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए अपील की दोबारा सुनवाई का आदेश दे सकते हैं जो प्रत्येक न्यायालय के पास न्यायहित को आगे बढ़ाने के लिए होती हैं और श्री त्रिपाठी किसी भी मामले में न्यायोचित नहीं थे। श्री तेज पाल सिंह के आदेश पर निर्णय देने के लिए, क्षेत्राधिकार के भीतर पारित एक आदेश, भले ही यह गलत हो। यह मानते हुए कि श्री तेज पाल सिंह, सत्र न्यायाधीश के रूप में, अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं, हमारी राय है कि वह ऐसी शक्तियों के प्रयोग में अपील की दोबारा सुनवाई का आदेश पारित नहीं कर सकते, जब धारा 369, संहिता की धारा 424 के साथ पढ़ी जाए, विशेष रूप से किसी न्यायालय द्वारा अपने आदेश में परिवर्तन या पुनर्विलोकन करने पर रोक लगाता है। अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग वह करने के लिए नहीं किया जा सकता जिसे करने से संहिता विशेष रूप से न्यायालय को रोकती है। जब दूसरे पक्ष ने आपत्ति उठाई तो श्री त्रिपाठी इस बात पर विचार करने में सक्षम थे कि क्या अपील उनके समक्ष दोबारा सुनवाई के लिए वैध है। उन्होंने प्रश्न पर विचार किया और सही निर्णय लिया।
>
> अपीलकर्ताओं से यह भी आग्रह किया जाता है कि श्री तेजपाल सिंह के पास 17 दिसंबर, 1956 को अपीलकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत आवेदन पर आदेश पारित करने का क्षेत्राधिकार था, जिसमें अपील की पुनः सुनवाई के लिए अनुरोध किया गया था और इसलिए उनके आदेश को पूरी तरह से क्षेत्राधिकार के बिना नहीं कहा जा सकता था। हम सहमत नहीं हैं। उनके पास निश्चित रूप से प्रस्तुत आवेदन का निपटारा करने का क्षेत्राधिकार था, लेकिन जब संहिता की धारा 369 निश्चित रूप से न्यायालय के निर्णय की पुनर्विलोकन या परिवर्तन को प्रतिबंधित करती है, तो उनके पास उठाए गए बिंदु पर विचार करने और अपील को अपास्त करने के आदेश को खारिज करने और इसकी पुनः सुनवाई का आदेश देने का कोई

क्षेत्राधिकार नहीं था।

13. अगला निर्णय श्रीमती सूरज देवी बनाम प्यारे लाल और अन्य, एआईआर 1981 एससी 736, का उद्धृत किया गया है, जहां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 विचारार्थ आये। इस न्यायालय ने निम्नलिखित प्रतिपादित किया :––

> "अपीलार्थी इंगित करता है कि उसने संहिता की धारा 482 द्वारा सहेजी गई उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का अवलंब लिया है और धारा 362 द्वारा अधिरोपित निषेध के बावजूद उच्च न्यायालय को अनुतोष देने की शक्ति थी। अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग वह करने के लिए नहीं किया जा सकता है जो संहिता (संकट सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य) द्वारा विशेष रूप से प्रतिषेध है। यह सही है कि न्यायालय के खिलाफ धारा 362 में अपने निर्णय में परिवर्तन या पुनर्विलोकन करने का प्रतिषेध "इस अदालत द्वारा या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य कानून द्वारा अन्यथा प्रदान किए गए प्रावधान" के अधीन है। यद्यपि, वे शब्द केवल उन प्रावधानों को संदर्भित करते हैं जहाँ न्यायालय को संहिता या अन्य कानून द्वारा अपने निर्णय को परिवर्तन या पुनर्विलोकन करने के लिए स्पष्ट रूप से अधिकृत किया गया है। धारा 362 में निहित प्रावधान के अलावा न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति पर अनुध्यात नहीं किया गया है और इसलिए, उस शक्ति के अवलंब लेने का प्रयास कोई लाभ नहीं दे सकता है।

14. अगला निर्णय मोस्ट सिमरिखिया बनाम श्रीमती डॉली मुखर्जी उर्फ श्रीमती छवि मुखर्जी और अन्य, एआईआर 1990 एससी 1605, का अवलंब लिया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

> " संहिता की धारा 362 में स्पष्ट रूप से प्रावधान किया गया है कि कोई भी न्यायालय जब किसी मामले को निपटाने के अपने निर्णय या अंतिम आदेश पर हस्ताक्षर कर लेती है, तो संहिता द्वारा अन्यथा प्रदान किए गए लिपिकीय या अंकगणितीय त्रुटि को सुधारने के अलावा उसे परिवर्तन या पुनर्विलोकन नहीं करेगी । धारा 482 उच्च न्यायालय को ऐसा आदेश देने में सक्षम बनाती है जो संहिता के तहत किसी भी आदेश को प्रभावी बनाने या किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के हितों को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक हो। यद्यपि, अंतर्निहित शक्तियाँ सिद्धांत और पूर्ववर्ती द्वारा नियंत्रित होती हैं जैसा कि क़ानून द्वारा इसकी व्यक्त शक्तियाँ होती हैं। यदि कोई मामला कानून के एक स्पष्ट पत्र द्वारा आच्छादित किया जाता है, तो न्यायालय वैधानिक प्रावधानों को मंजूरी नहीं दे सकती है और इसके बजाय अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र की आड़ में एक नया प्रावधान विकसित नहीं कर सकती है। "

15. इसी प्रभाव के लिए, इस न्यायालय का निर्णय **हरि सिंह मान बनाम हरमन सिंह बाजवा और अन्य, 2001 (1) एस. सी. सी. 169** में प्रतिवेदित किया गया है, जिस पर अपीलार्थी ने अवलंब लिया है।

16. अगला प्रकरण में **राज्य बनाम के.वी. राजेंद्रन और अन्य, 2008(8) एससीसी 673** अवलंब लिया गया है। इस न्यायालय के पास दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 और धारा 482 पर विचार करने का अवसर था । उपरोक्त मामले में **मोस्ट सिमरिखिया बनाम श्रीमती डॉली मुखर्जी (पूर्वोक्त)** में इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए इस न्यायालय द्वारा अनुच्छेद–18 में प्रतिपादित किया गया है :––

> "**18.** इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, आइए अब हम संहिता की धारा 362 पर ध्यान दें, जिसमें स्पष्ट रूप से यह प्रावधान है कि कोई भी न्यायालय जिसने अपने निर्णय और किसी मामले को निपटाने के अंतिम आदेश पर हस्ताक्षर किए हैं, लिपिकीय या अंकगणितीय त्रुटि को सुधारने के अलावा इसे परिवर्तन या पुनर्विलोकन नहीं करेगा, सिवाय इसके कि न्यायालय द्वारा अन्यथा प्रदान किया गया हो। इस स्तर पर, संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति के प्रयोग पर विचार किया जा सकता है। "

17. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने महुआ विश्वास (श्रीमती) बनाम स्वागत विश्वास और एक अन्य, (1998) 2 एस.सी.सी. 359 में इस न्यायालय के निर्णय का भी संदर्भ लिया है। उपरोक्त मामले में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत कार्यवाही में पक्षकारों ने समझौता किया और एक साथ रहने लगे लेकिन बाद में अलग हो गए। पति द्वारा एक आपत्ति उठाई गई थी कि भरण–पोषण के आदेश को पुनर्जीवित नहीं किया जा सका, जिसके साथ उच्च न्यायालय सहमत था। इस न्यायालय ने अपील को स्वीकार करते हुए भरण पोषण आवेदन को पुनर्जीवित किया। पैराग्राफ–3 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया थाः "

> "**3**. इस मामले को किसी भी दृष्टिकोण से देखा जा सकता है। यह देखा जा सकता है कि पत्नी द्वारा अपने वैवाहिक घर में खुद को फिर से पुनर्वास के लिए एक वास्तविक प्रयास किया गया था, लेकिन व्यर्थ रहा। कहने के तरीके से भरण–पोषण के पिछले आदेशों को निलंबित किया जा सकता था लेकिन पूरी तरह से ख़त्म नहीं किया जा सकता है। दूसरा दृष्टिकोण यह हो सकता है कि भरण–पोषण आदेश समाप्त हो गया था और इस प्रकार उसे कार्रवाई के नए वाद–कारण पर एक नया मुकदमा लड़ने के लिए छोड़ दिया जाए। इन दोनों पाठ्यक्रमों में से, हम पहले को अपनाना पसंद करेंगे, क्योंकि अगर हम दूसरे विकल्प का सहारा लेते हैं, तो यह अन्याय की ओर ले जाएगा। किसी दिए गए मामले में पत्नी अपने पति के साथ समझौता करने में अनिच्छुक हो सकती है, कहीं ऐसा न हो कि वह उसकी उपेक्षा या इनकार पर सुरक्षित गुजारा भत्ता का आदेश खो दे। दूसरी ओर, उसका पति अस्थायी सुलह के लिए पत्नी को धोखा देने के लिए भरण–पोषण के आदेश को ध्वस्त करने के लिए अचानक उपाय करेगा। इस प्रकार, पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए, हम तथ्यों और परिस्थितियों में भरण–पोषण के लिए पत्नी के दावे को सक्रिय करेंगे और उसे पहले की तरह ही स्थिति में रखेंगे। जाहिर है, उसने एक आंकड़े पर भरण–पोषण का आदेश प्राप्त किया है जिसे मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी की न्यायालय ने ध्यान में रखा था। इसे ध्यान में रखते हुए, हम पति को अपनी पत्नी और पुत्री प्रत्येक को 1000 रुपये की राशि का भुगतान करने का आदेश देते हैं, जो दिनांक 1–10–1997 से प्रभावी है। 12, 000 रुपये की राशि जो पहले इस न्यायालय द्वारा पत्नी और उसकी पुत्री को भरण–पोषण के बकाया के रूप में भुगतान करने का आदेश दिया गया था, उसे भरण–पोषण की दर को ध्यान दिए बिना दिनांक 30–9–1997 तक विधिवत भुगतान किया गया माना जाएगा। यह पक्षकारों के बीच विवाद को सुव्यवस्थित करता है। यह स्पष्ट किया जाता है कि वैवाहिक न्यायालय के समक्ष वैवाहिक विवाद उठाकर पक्षकारों के लिए ऐसी अन्य अनुतोष का दावा करने का विकल्प खुला है, जो उन्हें देय हो सकती है। "

18. दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 369 द्वारा निरूपित विधायी योजना के साथ–साथ दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 362 द्वारा निरूपित विधायी योजना एक ही है। आपराधिक न्यायालय पर अपने निर्णय को परिवर्तन करने या पुनर्विलोकन करने के लिए लगाया गया प्रतिबंध एक प्रयोजन और उद्देश्य से है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, इस न्यायालय के निर्णयों ने कानून को इस आशय से संक्षेप में प्रस्तुत किया है कि आपराधिक न्याय परिदान प्रणाली आपराधिक न्यायालय को लिपिकीय या अंकगणितीय त्रुटि को ठीक करने के अलावा मामले को निपटाने वाले निर्णय या अंतिम आदेश को

परिवर्तन करने या पुनर्विलोकन करने की शक्ति नहीं देती है। आपराधिक न्यायालय द्वारा पारित निर्णय या मामले को निपटाने का अंतिम आदेश पारित करने के बाद न्यायालय पदकार्य–निवृत्त बन जाता है और किसी भी गलती या स्पष्ट चूक को केवल कानून के अनुसार उपयुक्त मंच द्वारा ठीक करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

19. वर्तमान मामले में, हम दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत न्यायालय द्वारा पारित आदेश से चिंतित हैं। क्या दंड प्रकिया संहिता की धारा 362 के तहत निहित निषेध, न्यायालय को अपने निर्णय को परिवर्तन करने या पुनर्विलोकन करने से रोकता है या मामले का निपटारा करने वाला अंतिम आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत पारित आदेश पर लागू होता है। वर्तमान मामले में उत्तर दिया जाने वाला प्रश्न है।20. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 शब्द **"इस संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा जैसा उपबंधित है, उसके सिवाय"** शब्द से शुरू होती है। उपरोक्त अभिव्यक्ति का स्पष्ट अर्थ है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 363 में निहित कठोरता। निम्नलिखित दो शर्तों में छूट दी गई है:–

i) दंड प्रक्रिया संहिता द्वारा सिवाय इसके प्रावधानित किया गया है ।
(ii) तत्समय प्रवृत्त कोई अन्य कानून।

21. हमें पहले इस बात की जांच करने की आवश्यकता है कि क्या वर्तमान मामले में पारित आदेश अपवाद अर्थात "संहिता द्वारा उपबंधित अन्यथा इसके सिवाय" के अंतर्गत आते हैं। इस प्रकार, दंड प्रकिया संहिता की धारा 362, यद्यपि आपराधिक न्यायालय पर मामले का निपटारा करते हुए अपने निर्णय या अंतिम आदेश को परिर्वतन करने या पुनर्विलोकन करने के लिए निषेध करती है, लेकिन इसमें बताए गए अपवादों को शामिल किया गया है। विधायिका इस बात से अवगत थी कि ऐसी स्थितियां हैं और हो सकती हैं जहां आपराधिक न्यायालय के निर्णय में परिवर्तन या पुनर्विलोकन पर संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य कानून में विचार किया गया है। चूंकि, वर्तमान मामला केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 से संबंधित हैं, इसलिए हमें इस बात की जांच करने की आवश्यकता है कि क्या धारा दंड प्रकिया संहिता की धारा 145, ने किसी भी तरह से दंड प्रकिया संहिता की धारा 362 की कठोरता में ढील दी है।

22. इससे पहले कि हम दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की विधायी योजना पर गौर करने के लिए आगे बढ़ें, हमें कानूनों की व्याख्या के कुछ नियमों पर ध्यान देने की आवश्यकता है जब न्यायालय सामाजिक न्याय कानून की निर्वचन से संबंधित है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 एक सामाजिक न्याय विधायिका है जो पत्नियों, बच्चों और माता–पिता के भरण–पोषण के लिए आदेश देता है। पत्नियों, बच्चों और माता–पिता का भरण–पोषण एक निरंतर दायित्व है। इस न्यायालय को बादशाह बनाम उर्मिला बादशाह गोडसे और अन्य, (2014) 1 एससीसी 188 में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के निर्वचन पर विचार करने का अवसर मिला। पैराग्राफ 13.3 से 18 में, निम्नलिखित प्रतिपादित किया गया है: –

> **"13.3.** तीसरा, ऐसे मामलों में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के प्रावधानों की उद्देश्यपूर्ण व्याख्या की जानी चाहिए । इस प्रावधान के तहत एक बेसहारा पत्नी या असहाय बच्चों या माता–पिता के आवेदन पर विचार करते समय, न्यायालय समाज के हाशिए पर रहने वाले वर्गों के साथ व्यवहार कर रहा है। इसका उद्देश्य "सामाजिक न्याय" प्राप्त करना है जो भारत के संविधान की प्रस्तावना में निहित संवैधानिक दृष्टि है। भारत के संविधान की प्रस्तावना स्पष्ट रूप से संकेत देती है कि हमने अपने सभी नागरिकों के लिए न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व सुनिश्चित करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कानून के शासन के तहत लोकतांत्रिक मार्ग चुना है। यह विशेष रूप से उनके सामाजिक न्याय को प्राप्त करने पर प्रकाश डालता है। इसलिए, सामाजिक न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाना न्यायालयों का बाध्यकारी कर्तव्य बन जाता है। किसी विशेष प्रावधान की व्याख्या करते समय, न्यायालय को कानून और समाज के बीच की खाई को पाटना

चाहिए।

14. हाल ही में, इस दिशा में, इस बात पर जोर दिया जाता है कि न्यायालयों को "सामाजिक न्याय निर्णय" में अलग–अलग दृष्टिकोण अपनाने होते हैं, जिसे "सामाजिक संदर्भ निर्णय" के रूप में भी जाना जाता है क्योंकि केवल "प्रतिकूल दृष्टिकोण" बहुत उपयुक्त नहीं हो सकता है। समाज में कमजोर वर्गों को विशेष सुरक्षा और लाभ देने वाले कई सामाजिक न्याय विधायिकाएँ हैं। प्रो. माधव मेनन इसका स्पष्ट रूप से वर्णन करते हैंः––

"इसलिए, यह सम्मानपूर्वक प्रस्तुत किया जाता है कि 'सामाजिक संदर्भ का निर्धारण' अनिवार्य रूप से समानता न्यायशास्त्र का अनुप्रयोग है जैसा कि संसद और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायालयों के समक्ष प्रस्तुत असंख्य स्थितियों में विकसित किया गया है, जहां असमान पक्ष प्रतिकूल कार्यवाही में खड़े हैं और जहां न्यायालयों को समान न्याय देने के लिए बुलाया जाता है। असमान लड़ाई में गरीबों की अक्षमताओं को बढ़ाने वाली सामाजिक–आर्थिक असमानताओं के अलावा, प्रतिकूल प्रक्रिया स्वयं कमजोर पक्ष के नुकसान के लिए काम करती है। ऐसी स्थिति में, न्यायाधीश को न केवल शामिल पक्षों की असमानताओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए, बल्कि कमजोर पक्ष के प्रति सकारात्मक झुकाव भी होना चाहिए यदि असंतुलन के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता नहीं होती है। यह परिणाम सामाजिक संदर्भ निर्णय या सामाजिक न्याय निर्णय द्वारा प्राप्त किया जाता है।

15. भरण–पोषण का प्रावधान निश्चित रूप से इस श्रेणी में आएगा जिसका उद्देश्य निराश्रितों को सशक्त बनाना और सामाजिक न्याय या व्यक्ति की समानता और गरिमा प्राप्त करना है। इस प्रावधान के तहत मामलों से निपटने के दौरान, "प्रतिकूल" मुकदमेबाजी से सामाजिक संदर्भ में निर्णय लेने के दृष्टिकोण में बदलाव समय की आवश्यकता है।

16. कानून लोगों के बीच संबंधों को नियंत्रित करता है। यह व्यवहार के प्रतिरुप निर्धारित करता है। यह समाज के मूल्यों को दर्शाता है। न्यायालय की भूमिका समाज में कानून के उद्देश्य को समझना और कानून को उसके उद्देश्य को प्राप्त करने में मदद करना है। लेकिन समाज का कानून एक जीवित जीव है। यह एक दी गई तथ्यात्मक और सामाजिक वास्तविकता पर आधारित है जो लगातार बदल रही है। कभी–कभी कानून में परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन से पहले होता है और इसका उद्देश्य इसे प्रोत्साहित करना भी होता है। यद्यपि ज्यादातर मामलों में, कानून में परिवर्तन सामाजिक वास्तविकता में परिवर्तन का परिणाम है। वास्तव में, जब सामाजिक वास्तविकता बदलती है, तो कानून को भी बदलना चाहिए। जिस तरह सामाजिक वास्तविकता में परिवर्तन जीवन का नियम है, उसी तरह सामाजिक वास्तविकता में परिवर्तन के प्रति प्रतिक्रिया कानून का जीवन है। यह कहा जा सकता है कि कानून का इतिहास समाज की बदलती परिस्थितियों के अनुरूप कानून को अपनाने का इतिहास है। संवैधानिक और वैधानिक दोनों व्याख्याओं में, न्यायालय को कानून के व्यक्तिपरक और वस्तुनिष्ठ उद्देश्यों के बीच उचित संबंध निर्धारित करने में विवेक का प्रयोग करना चाहिए।

17. कार्डोजो अपने क्लासिक में स्वीकार करता है

"... न्याय शास्त्र की कोई भी प्रणाली इसकी आवश्यकता से बचने में सक्षम नहीं रही है। "और वे विस्तार से बताते हैंः

"यह सच है कि संहिताएं और क़ानून न्यायाधीश को निरर्थक नहीं बनाते हैं, न ही उसके काम को निरर्थक और यांत्रिक बनाते हैं। कुछ कमियाँ हैं जिन्हें भरना है। ... ऐसी कठिनाइयाँ और गलतियाँ हैं जिन्हें यदि टाला न जाए तो कम किया जा सकता है। व्याख्या के बारे में अक्सर इस तरह बात की जाती है जैसे कि यह एक अर्थ की खोज और खोज के अलावा और कुछ नहीं है, जो हालांकि अस्पष्ट और अव्यक्त है, फिर भी विधायक के दिमाग में एक वास्तविक और सुनिश्चित अस्तित्व है। प्रक्रिया, वास्तव में, कभी–कभी यही होती है, लेकिन अक्सर यह कुछ और होती है। किसी क़ानून का अर्थ बताने में किसी न्यायाधीश की मंशा का पता लगाना सबसे कम परेशानी हो सकती है। ...

ग्रे अपने व्याख्यानों में कहते हैंः

"तथ्य यह है कि तथाकथित व्याख्या की कठिनाइयाँ तब उत्पन्न होती हैं जब विधायिका का कोई अर्थ नहीं होता है; जब कानून पर उठाया गया प्रश्न उसके सामने कभी नहीं आता है; जब न्यायाधीशों को क्या करना है, यह निर्धारित करने के लिए नहीं है कि विधायिका का अर्थ उस बिंदु पर था जो उसके दिमाग में मौजूद था, बल्कि यह अनुमान लगाने के लिए कि वह उस बिंदु पर क्या इरादा रखता जो उसके दिमाग में मौजूद नहीं था, अगर बिंदु मौजूद होता। "" ""

18. कानून के व्याख्याकर्ता के रूप में न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह स्वतंत्र निर्णय की एक विधि – लिब्रे रीचर्चे साइंटिफिक यानी "मुक्त वैज्ञानिक अनुसंधान" के माध्यम से चूक प्रदान करे, अनिश्चितताओं को ठीक करे और न्याय के साथ परिणामों का सामंजस्य स्थापित करे। हमारी राय है कि एक गैर–खंडन योग्य धारणा है कि विधायिका ने अपने संवैधानिक कर्तव्य को अच्छे विश्वास से पूरा करने के लिए धारा 125 सीआरपीसी जैसे प्रावधान करते समय हमेशा "पत्नी" बनने वाली महिला को ऐसी परिस्थितियों में अनुतोष देने का इरादा किया था। लैंगिक न्याय से संबंधित मुद्दों पर निर्णय लेते समय इस दृष्टिकोण की विशेष रूप से आवश्यकता है। इस संबंध में अनुकरणीय प्रयासों के उदाहरण पहले से ही हमारे पास हैं। मुस्लिम महिलाओं को भरण–पोषण के अधिकार की गारंटी देने वाली शाह बानो से शबाना बानो तक की यात्रा एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

23. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का बारीकी से अवलोकन स्वयं इंगित करता है कि न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत कार्यवाही में निर्णय या अंतिम आदेश पारित करने के बाद पदकार्य–निवृत्त नहीं बन जाता है। धारा में ही स्पष्ट प्रावधान हैं जहां दंड प्रक्रिया सहिता की धारा 125 के तहत पारित आदेश को रद्द या परिवर्तन किया जा सकता है जो धारा 125 (1), धारा 125 (5) और Cr.P.C की धारा 127 से ध्यान देने योग्य है, जिसका प्रभाव निम्नलिखित हैंः–

"125(1). पत्नियों, बच्चों और माता–पिता के भरण–पोषण के लिए आदेश–(1) यदि कोई व्यक्ति जिसके पास पर्याप्त साधन हैं, उपेक्षा करता है या पालन–पोषण करने से इनकार करता है –

(क) उसकी पत्नी, जो अपना भरण–पोषण करने में असमर्थ है, या

(ख) उसका वैध या अवैध नाबालिग बच्चा, चाहे वह विवाहित हो या न हो, अपना भरण–पोषण करने में असमर्थ हो, या

(ग) उसका वैध या अवैध बच्चा (विवाहित बेटी न हो) जो वयस्क हो गया है, जहां ऐसा बच्चा किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या चोट के कारण है जो खुद को बनाए रखने में असमर्थ है, या

(घ) उसके पिता या माता, जो अपना भरण–पोषण करने में असमर्थ हैं,
प्रथम श्रेणी का मजिस्ट्रेट, ऐसी उपेक्षा या इनकार के सबूत पर, ऐसे व्यक्ति को अपनी पत्नी या ऐसे बच्चे, पिता या माँ के भरण–पोषण के लिए ऐसी मासिक दर पर मासिक भत्ता देने का आदेश दे सकता है, जैसा कि मजिस्ट्रेट उचित समझे, और ऐसे व्यक्ति को समान भुगतान करना जिसे मजिस्ट्रेट समय–समय पर निर्देशित कर सके:

इस शर्त पर कि, मजिस्ट्रेट खंड (बी) में निर्दिष्ट अव्यस्क बालिका के पिता को उसके वयस्क होने तक ऐसा भत्ता देने का आदेश दे सकता है, यदि मजिस्ट्रेट संतुष्ट है कि ऐसी नाबालिग लड़की का पति, यदि विवाहित है,के पास पर्याप्त साधन नहीं है नहीं है :

[इस शर्त पर कि, मजिस्ट्रेट, इस उपधारा के तहत भरण–पोषण के लिए मासिक भत्ते के संबंध में कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, ऐसे व्यक्ति को अपनी पत्नी या ऐसे बच्चे, पिता या माता के अंतरिम भरण–पोषण के लिए मासिक भत्ता देने का आदेश दे सकता है, और ऐसी कार्यवाही का खर्च जिसे मजिस्ट्रेट उचित समझता है, और उसे ऐसे व्यक्ति को भुगतान करना है जिसे मजिस्ट्रेट समय–समय पर निर्देशित कर सकता है:

इस शर्त पर कि अंतरिम भरण–पोषण के लिए मासिक भत्ते और दूसरे परंतुक के तहत कार्यवाही के खर्चों के लिए एक आवेदन, जहां तक संभव हो, ऐसे व्यक्ति को आवेदन की सूचना की सेवा की तारीख से साठ दिनों के भीतर निपटाया जाएगा।]

स्पष्टीकरण–इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए –

(क) "अप्राप्तवय" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने भारतीय व्यस्कता अधिनियम, 1875 (1875 का 9) के प्रावधानों तहत माना जाता है कि उसने वयस्कता प्राप्त नहीं की है;

(ख) "पत्नी" में एक ऐसी महिला शामिल है जिसका अपने पति से तलाक हो गया है या जिसने तलाक ले लिया है और उसने फिर से शादी नहीं की है।

125(5). इस बात के प्रमाण पर कि कोई भी पत्नी जिसके पक्ष में इस धारा के तहत आदेश दिया गया है, जारकर्म में रह रही है, या कि पर्याप्त कारण के बिना, वह अपने पति के साथ रहने से इनकार करती है, या कि वे आपसी सहमति से अलग रह रहे हैं, मजिस्ट्रेट आदेश को निरस्त कर देगा।

127. भत्ते में परिवर्तन– (1) धारा 125 के अधीन भरण–पोषण के लिए अथवा अंतरिम भरण–पोषण के लिए मासिक भत्ता पाने वाले या, यथास्थिति, अपनी पत्नी या संतान, पिता या माता को मासिक भत्ता देने के लिए उसी धारा के अधीन आदिष्ट किसी व्यक्ति की परिस्थितियों में तब्दीली साबित हो जाने पर मजिस्ट्रेट भत्ते में ऐसा परिवर्तन कर सकता है, जो वह ठीक समझे।

(2) जहां मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि धारा 125 के अधीन दिया गया कोई आदेश किसी सक्षम सिविल न्यायालय के किसी विनिश्चय के परिणामस्वरुप रदद या परिवर्तित किया जाना चाहिए वहॉ वह, यथास्थिति, उस आदेश को तदनुसार रदद कर देगा या परिवर्तित कर देगा ।

(3) जहाँ धारा 125 के अधीन कोई आदेश ऐसी स्त्री के पक्ष में दिया गया है जिसके पति ने उससे विवाह–विच्छेद कर लिया है या जिसने अपने पति से

विवाह–विच्छेद कर लिया है या जिसने अपने पति से विवाह–विच्छेद प्राप्त कर लिया है वहॉ यदि मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि–

(क) उस स्त्री ने, ऐसे विवाह–विच्छेद की तारीख के बाद, पुनर्विवाह किया है, तो वह ऐसे आदेश को अपने पुनर्विवाह की तारीख से रद्द कर देगा,

(ख) उस स्त्री के पति ने उससे विवाह–विच्छेद कर लिया है और उस स्त्री ने उक्त आदेश के पूर्व या पश्चात वह पूरी धनराशि प्राप्त कर ली है जो पद्धाकरों को लागू किसी रुढिजन्य या स्वीय विधि के अधीन ऐसे विवाह–विच्छेद पर देय थी तो वह ऐसे आदेश को, ––

(i) उस दशा में जिसमें ऐसी धनराशि ऐसे आदेश से पूर्व दे दी गई थी उस आदेश के दिए जाने की तारीख से रदद कर देगा,
(ii) किसी अन्य दशा में उस अवधि की, यदि कोई हो, जिसके लिए पति द्वारा उस स्त्री को वास्तव में भरण–पोषण दिया गया है, समाप्ति की तारीख से रदद कर देगा,

(ग) उस स्त्री ने अपने पति से विवाह–विच्छेद प्राप्त कर लिया है और उसे अपने विवाह–विच्छेद के पश्चात अपने [भरण–पोषण या अंतरिम भरण–पोषण जैसी भी स्थिति हो, के अधिकारों का स्वेच्छा से अभ्यर्पण कर दिया था, तो वह आदेश को उसकी तारीख से रदद कर देगा ।
(4) किसी भरण–पोषण या दहेज की, किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसे धारा 125 के अधीन कोई [भरण–पोषण या अंतरिम भरण–पोषण के लिए अथवा उनमें से किसी के लिए कोई मासिक भत्ता संदाय किए जाने का आदेश] दिया गया है, वसूली के लिए डिक्री करने के समय सिविल न्यायालय उस राशि की भी गणना करेगा, जो ऐसे [ऐसे आदेशके अनुसरण में भरण–पोषण अथवा उनमें से किसी के लिए यथास्थिति मासिक भत्ते के रुप में] उस व्यक्ति को संदाय की जा चुकी है या उस व्यक्ति द्वारा वसूल की जा चुकी है ।

24. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में. प्रयुक्त अभिव्यक्ति का उपयोग **"समय–समय पर मजिस्ट्रेट द्वारा निर्देशित"** के रूप में किया जाता है 'समय–समय पर' अभिव्यक्ति के उपयोग का उद्देश्य और अर्थ होता है। यह स्पष्ट रूप से अनुध्यात करता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 (1) के तहत पारित आदेश के संबंध में, मजिस्ट्रेट को समय–समय पर क्षेत्राधिकार का प्रयोग करना पड़ सकता है। 'समय–समय पर' अभिव्यक्ति का प्रयोग किसी विशेष मामले में मजिस्ट्रेट के क्षेत्राधिकार का प्रयोग है। पी. रामनाथ अय्यर द्वारा लिखित एडवांस्ड लॉ लेक्सिकन, तृतीय संस्करण 'समय–समय पर' को इस प्रकार परिभाषित करता है:– **"समय–समय पर"** जैसे ही अवसर आता है"

25. उपरोक्त विधायी योजना इंगित करती है कि मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत आदेश पारित करने के बाद पदकार्य–निवृत्त नहीं बन जाता है, जब एवं जैसा भी अवसर आता है, तो मजिस्ट्रेट समय–समय पर क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(5) द्वारा, मजिस्ट्रेट को कुछ शर्तों की पूर्ति पर दंड प्रक्रिया संहिता 125(1) के तहत पारित आदेश को रद्द करने का स्पष्ट अधिकार है।

26. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 उस विधायी आशय का भी खुलासा करती है जहां मजिस्ट्रेट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत पारित आदेश को परिवर्तित का अधिकार है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 की उपधारा (2), मजिस्ट्रेट को धारा 125 के तहत किसी आदेश को रद्द करने या परिवर्तित करने का अधिकार देती है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 और 127 द्वारा उल्लिखित विधायी योजना, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, आपराधिक प्रक्रिया संहिता में प्रदान की गई परिस्थितियों और घटनाओं का स्पष्ट रूप से गणना की गई है, जहां न्यायालय मामले का निपटारा करने

वाला निर्णय या अंतिम आदेश पारित कर उसमें परिवर्तन या पुनर्विलोकन कर सकती है। इस प्रकार, धारा 362 में निहित प्रतिबंध को ऊपर बताए अनुसार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत कार्यवाही में स्पष्ट रूप से छूट दी गई है।

27. अपीलकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत निवेदन केवल धारा 362 के प्रतिबंध पर आधारित थीं और जब धारा 125 के तहत कार्यवाही में धारा 362 के प्रतिबंध में स्पष्ट रूप से छूट दी जाती है, तो हम अपीलार्थी के अधिवक्ता के निवेदनों को स्वीकार करने के लिए राजी नहीं हैं कि परिवार न्यायालय वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अपने आदेश दिनांक 06.05.2017 के आदेश को अपास्त एवं निरस्त करने का हकदार नहीं है।

28. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, दंड प्रकिया संहिता की धारा 125 (1) के तहत कार्यवाही का निपटारा पक्षों के बीच हुए समझौते पर किया गया था। दिनांक 06.05.2017 को कुटुम्ब न्यायालय द्वारा पारित आदेश इस प्रकार हैः –

> "इस चैंबर में किए गए सुलह के प्रयासों पर हस्ताक्षर किए गए। आज नयायालय में पृथक से अभिलिखित नियमों और शर्तों पर पक्षों ने मामले को सौहार्दपूर्ण तरीके से सुलझा लिया है, जिसके अनुसार, प्रतिवादी/संजय कपूर को याचिकाकर्ता क्रमांक–1 एवं 3 के भरण–पोषण के लिए प्रति माह 25,000/– रुपये माह जुलाई 2015 से भुगतान करना होगा, जिसमें से मई से अप्रैल 2017 तक के भरण–पोषण की बकाया राशि का भुगतान याचिकाकर्ता क्रमांक–1 चंदना के बैंक खाते में आज से छह महीने के भीतर किया जाएगा और मई 2017 से प्रति माह 25,000/– रुपये भरण पोषण उसके द्वारा चंदना के बैंक खाते में प्रत्येक कैलेंडर माह के 10 वें दिन या उससे पहले खाते में भुगतान किया जाएगा। पक्षकार अपने कथन से बंधनकारी होंगे। आज न्यायालय में अभिलिखित किए गए बयान को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान याचिका का तदनुसार निपटारा किया जाता है, और प्रतिवादी/संजय कपूर, याचिकाकर्ता क्रमांक–2 और 3 को समय–समय पर, जो सीधे चंदना के बैंक खाते में जमा किया जाएगा। वह छह महीने के भीतर जुलाई 2015 से अप्रैल 2017 तक देय भरण–पोषण की बकाया राशि रुपए 25,000/– की दर से प्रति माह का भुगतान करेगा। संजीव कपूर द्वारा की गई प्रतिबद्धता को पूरा न करने की स्थिति में, याचिकाकर्ता कानून के अनुसार कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र होंगे। आवश्यकता होने के बाद, नस्ती को अभिलेखों में भेज दिया जाए।
>
> हस्ता/–
> सूरज बसवाना
> जिला न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय–II,
> फरीदाबाद
> यूआईडी क्रमांक– एचआर.–0487"

29. यह अभिलेख में आया है कि समझौते पर उपरोक्त आदेश पारित करने के बाद, अपीलार्थी ने अपने प्रकरण के अनुसार केवल एक लाख सत्ताईस रुपये की राशि का भुगतान किया है, अर्थात मई 2017 के बाद चार महीने का भरण–पोषण। जुलाई, 2015 से अप्रैल 2017 तक के बकाया का भुगतान अपीलार्थी द्वारा छह महीने के भीतर नहीं किया गया है, जिसका कि न्यायालय द्वारा समय की अनुमति दी गई थी। जब अपीलकर्ता ने समझौते के तहत अपनी प्रतिबद्धता का सम्मान नहीं किया, तो क्या अपीलकर्ता द्वारा समझौते की शर्तों का पालन न करने पर भरण–पोषण के मंजूरी के लिए दबाव न बना पाने से पत्नी को अधर में छोड़ा जा सकता है। इसका जवाब स्पष्ट रूप से 'नहीं' है। दंड प्रकिया संहिता की धारा 125 की व्याख्या इस तरह से की जानी चाहिए कि न्याय को आगे बढ़ाया जा सके और उस महिला की रक्षा की जा सके जिसके लाभ के लिए प्रावधान किए गए हैं।

30. हमने **महुआ बिस्वास (श्रीमती) (पूर्वोक्त)** में इस न्यायालय के फैसले पर ध्यान दिया है, जहां इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत कार्यवाही में समझौता करने से पहले पत्नी को उसी स्थिति में रखने के लिए पत्नी के भरण–पोषण के दावे को सक्रिय कर दिया था। यद्यपि, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का निवेदन है कि **महुआ बिस्वा (श्रीमती)** का मामला, इस न्यायालय के निर्णय पर लागू नहीं है, हम इस निवेदन से सहमत नहीं हैं।उपरोक्त प्रकरण में, मजिस्ट्रेट द्वारा टोकन राशि का भरण–पोषण देने का आदेश पारित किया गया था, जिसके खिलाफ वह पुनरीक्षण के लिए उच्च न्यायालय में चली गई, जहॉ यह देखा गया कि दोनों पक्षकारों के बीच वैवाहिक मामले में समझौता हो गया था और एक शर्त यह थी कि पत्नी जायेगी और अपने पति के साथ रहेगी। पत्नी पति के साथ रहने चली गई लेकिन बाद में पति–पत्नी अलग हो गए। पति ने तर्क दिया कि भरण–पोषण के आदेश को पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता क्योंकि कार्रवाई का एक नया वाद–कारण उत्पन्न हो गया है। उच्च न्यायालय ने भरण–पोषण के आदेश को अपास्त कर दिया था और पत्नी को उचित अनुतोष के लिए फिर से दांडिक न्यायालय के पास जाने के लिए छोड दिया गया था। इस न्यायालय ने अपील को स्वीकार करते हुए पत्नी के भरण–पोषण के दावे को सक्रिय कर दिया था और उसे पहले जैसी स्थिति में डाल दिया था। उपरोक्त निर्णय स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि इस न्यायालय ने वह रास्ता अपनाया जिससे पत्नी के साथ अन्याय होने से बचा जा सके।

31. इस प्रकार, हमारी सुविचारित राय है कि कुटुम्ब न्यायालय द्वारा वर्तमान प्रकरण में पारित आदेश दिनांक 06–05–2017 को अपास्त करके दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत पत्नी के भरण–पोषण के आवेदन को पुनर्जीवित करते हुए समझौते पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 में निहित प्रतिबंध पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का यह निवेदन कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362, मजिस्ट्रेट को दिनांक 05.01.2019 का, आदेश पारित करने से रोकती है, स्वीकार नहीं की जा सकती।

32. उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत आवेदन को अस्वीकार करने में कोई त्रुटि कारित नहीं की। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दी गई उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का उपयोग न्याय के हितों को सुरक्षित करने के लिए किया जाता है। कुटुम्ब न्यायालय द्वारा दिनांक 05–01–2019 को पारित आदेश में पत्नी के भरण–पोषण आवेदन को पुनर्जीवित करने में पर्याप्त न्याय किया है, जिसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

33. अतः हम इस अपील में कोई गुण–दोष नहीं पाते हैं। अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज

Translated, validated and corrected by
Shri T.K. Sahu, A.G.–I
(Suvas Cell)
High Court of C.G.